Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

626
A157

# चौंसठ कविताएँ

इन्दु जैन

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक – २०३
सम्पादक एवं नियामक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन

CHOUNSATH KAVITAYEN
( Poems )
INDU JAIN
*Bharatiya Jnanpith Publication*
First Edition 1964
Price Rs. 3.00
©
प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय
९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५
विक्रय केन्द्र
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
प्रथम संस्करण १९६४
मूल्य तीन रुपये

सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी–५

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Acc. No 30074
Cost Rs. 3.00
Date 17.7.68

Sri Pratap Singh Library Srinagar.

H 81.1
D2Ch


| | | |
|---|---|---|
| १. नींद डूबे जंगल में | .... | १ |
| २. ख़ैयाम के अहेरी की तरह | .... | २ |
| ३. सेम में फूल आ गये | .... | ४ |
| ४. अन्दर से फोड़ता प्रवाह चला आता है | .... | ६ |
| ५. दूर बहुत दूर वहाँ | .... | ८ |
| ६. बीते पल सपनों-से | .... | ९ |
| ७. मैं तुम्हारी ख़ुशबू में पगे | .... | ११ |
| ८. असन्तोष की तीखी तेज़ आग-धूपमें | .... | १२ |
| ९. घुटने तोड़ दिये हैं | ... | १४ |
| १०. आ गया पतझार | ... | १६ |
| ११. और तब फिर याद आयेगी | .... | १८ |
| १२. काम में लगी हुई भूली रही | .... | २० |
| १३. एक क्षण अकस्मात् | .... | २१ |
| १४. बिना गिरे आँसुओं से | .... | २३ |
| १५. मुझे एक सपना दिखता है | .... | २४ |
| १६. इधर दो दिन लगातार | .... | २६ |
| १७. यह असम्पृक्तता क्या है ? | .... | २८ |
| १८. यह हवा का सर्द सा झोंका | .... | २९ |
| १९. जिस दर्द से तिलमिलाकर | .... | ३० |


CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.


२०. पतली पगडण्डी सी .... ३२
२१. मैंने ऊँचे बादल देखे .... ३३
२२. 'चलो' — कहो एक बार .... ३६
२३. सूखे दिन में रस-भीनी बातें .... ३८
२४. बाँस के बहुत घने झुरमुट की .... ४०
२५. होंठ सी कर .... ४१
२६. मोर का अजब सपना .... ४२
२७. याद की उँगलियाँ .... ४४
२८. आत्मारहित पशुवत् देह की पुकार .... ४६
२९. उस इंगित को तुम्हें बता दूँ .... ४८
३०. रात भर गीत चले .... ५०
३१. यदि जीवन वह होता ना .... ५२
३२. चाहती हूँ .... ५३
३३. उजले उजाले से घिरी हुई चलती हूँ .... ५५
३४. गीत की असह्य साधारणता .... ५६
३५. गुलाब-सी सुबह में .... ५८
३६. बहुत समझदार .... ५९
३७. पदाघात से अशोक फूल आता है .... ६१
३८. अलसी भरी हवाएँ डोलीं .... ६२
३९. पंख लगा दूर उड़ जाना .... ६३
४०. रंग बहुत मिल गये .... ६५
४१. तपे हुए माथे पर .... ६६
४२. ओ मीठे निरर्थक बोलों के प्रणेता .... ६७
४३. सिर्फ़ याद और याद और याद .... ६८
४४. मोहक बन्धनों में अड़ी हुई फाँस .... ७०
४५. बहुजन की पीड़ा के वन से .... ७१
४६. कभी-कभी ऐसा भी लगता है .... ७३
४७. सुबह, जो हर दिन .... ७५
४८. विक्षिप्त और लड़खड़ाते पाँव .... ७७
४९. दर्द की कुछ और कड़ियाँ बढ़ गयी हैं .... ७८
५०. दो पत्र .... ७९
५१. रात एक नया गीत गाया था .... ८४


CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

| | | | |
|---|---|---|---|
| ५२. | एक परत, एक लहर | .... | ८५ |
| ५३. | दुपहरिया फूलों-सा तपा-छिपा प्यार | .... | ८६ |
| ५४. | एक गहरी आवाज़ | .... | ८८ |
| ५५. | मैंने बहुत से कोमल भावों की | .... | ९० |
| ५६. | काश, मेरी कविता | .... | ९२ |
| ५७. | भीड़ भरी अकेली शाम | .... | ९४ |
| ५८. | गुलाबी कमरे में बैठे-बैठे | .... | ९६ |
| ५९. | दूरी की अतल गहराइयों को नापती | .... | ९७ |
| ६०. | व्यक्तित्व की परतों में | .... | ९९ |
| ६१. | प्रथम स्पर्श का जन्म-दिन | .... | १०१ |
| ६२. | मीत हमारे | .... | १०२ |
| ६३. | एक बहुत बड़ा पंखवाला पीला साँप | .... | १०३ |
| ६४. | चन्दन तन पर रिसते नासूर लिये | .... | १०५ |

० ० ० ०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गुलाब-सी सुबह् में
काँटे-सा कसकता मन —

चाँद के दर्पण में
चोट की तरेड़

मेरी बिटिया के
बादल-से पैर में चुभी
शीशे की कनी —

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

०
०
०
०

# चौंसठ कविताएँ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१

नींद-डूबे जंगल में
छिपा हुआ चाँद

यह
मेरा वातावरण है।

तड़की हुई बाँसुरी में
थमी हुई तान

यह
मेरा मन है।

बन्धन में पले मृग-शावक की
भूली हुई गति
तुम हो।

— सब अपनी-अपनी जगह लाचार, असहाय —

●

१ जून १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२

ख़ैयाम के अहेरी की तरह
दोनों ने फेंके थे जाल –

मेरे में आ फँसा सूर्य
तेरे में सिर्फ़ कुछ भीगे हुए फूल ।

सूर्य को उठा लिया मस्तक पर
गर्व से ।
— तुम
झुरे फूल धर हथेली पर
देखते रहे ।

पिघला निजत्व और तपा हुआ माथा ले
द्वार पर पहुँची
और
बैठ गयी चौखट पर ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुमने
उछाल दिये खिन्न फूल
आले में
और एक बेफ़िक्र तान गुनगुनाते
चल दिये फिर से
तट की
परिचित
डगर।

●

२ अक्तूबर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३

सेम में फूल आ गये
सहेली !
देख – आ !
या कहूँ –
जाड़े में
शीशे की झील पर
तैरी कपास ।
या
धूप के सुनहरे हरे
खेत लहरा गये ।
देख – आ !

छुटे बाल, गाल छू
हवा ने बताया था –
'रात को बसन्ती रंग
आँगन में छाया था ।'

छाया था
रात को बसन्ती रंग ?
उगी थी केसर पहाड़ों पर ?
उगी ही होगी तब –
रात झूठ बोल कर
बचेगी क्या ?



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देखा था भोरे ही
कुहरा तो ख़ुद मैंने।
बूँदें भी परसी थीं।

और फिर —
सबसे बड़ी बात —
यहाँ
सेम जो फूली है!

●

९ फ़रवरी १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४

अन्दर से फोड़ता
प्रवाह
चला आता है — तोड़ता
मस्तक कर ऊँचा ।

एक-एक पसली की दुःखन
साँसों की झटक
बड़ी असह ।
कहाँ राजरोग प्राणों पर आ बैठा !

पिंजरे में इतना भी नहीं
नभ मिला —
पंख हिल जाते,
चोंच खोल पाता अन्धा पाँखी,
बोल कभी पाता —
वह प्यासा है ।

बात बहुत सीधी-सी कहनी थी —
उलझ गयी ।
लमहे-भर में दुनिया
इधर-उधर
हो जाया करती है ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धरती, अम्बर, सोना, नीलम
सब
उलट-पुलट पल-भर में होते हैं।

तीखी-सी सुई चुभी
हाथ हटा
सुई नहीं रुकी
और
चुभन नहीं थमी,
नोक बरछी-सी पैठती चली गयी।

पतले सूराख़ से
जगह ज़रा पाते ही,
युग-युग का दबा, रुका
अन्दर से फोड़ता
प्रवाह
चला आता है तोड़ता —
मस्तक कर ऊँचा !
●

२६ नवम्बर १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

५

दूर बहुत दूर वहाँ
सूनसान
प्यास फटा रेगिस्तान
पैर धँसे
होंठ खुले
बाँह कहीं गही नहीं गयी
वहाँ
बाँह कहीं मिली ही नहीं ।

●

१४ जनवरी १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

६

बीते पल सपनों-से,
            दूर हुए जाते हैं।
सपने दिन में बीती घड़ियों-से,
            पास बहुत;
मन घेरे, बेसुध गोदी में ले,
            लोरी दे,
थपक-थपक गाते हैं।

कैसी तब जाग
            और सोना ही कैसा तब !
मिला-जुला उलझाया !!

दूरी की घुमरीली,
ऊँची-नीची सड़कें,
            — थके-थके सपनों के बैलों को —
            — हसरत के उँघे झुके राही को —
लगातार रोती-सी घण्टी सुन
वहीं कहीं,
गले लगा,
आँसू भर,
            रोक लिया करती हैं।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मानो मन से पत्थर सरकेगा !
मानो तन की साँकल
ठण्डी सड़कों के गर्म-गर्म आँसू से
मोम बनी पिघलेगी !

बीते पल सपनों से —
सपनों में आने दे !
ये ही मेरे — अपने —
आत्मज हैं ।
कम से कम आज,
अभी !

२४ नवम्बर १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

७

मैं तुम्हारी ख़ुशबू में पगे
अपने आँचल से डर गयी हूँ;
साँप की तरह
गुंजलक में लपेट
दंश कर लेता है मन पर,
रगों में बेहोशी के झरने बहाता है,
सुलाता है ।

इस आँचल की तेजोमयी आँखों से
मन्त्रमुग्ध हिरनी-सी
बँधी हुई
खड़ी हूँ ।

व्याध या वधिक की
दिशा से अजानी
मृत्यु के वृत्त में
काले मोती-सी
जड़ी हूँ ।

●

२१ अगस्त १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

८

असन्तोष की तीखी
तेज़ आग-धूप से
प्राणों का फूल
विरस,
सूखा,
मुरझाने दो।
जल ही अब जाने दो
मन के
मधु किंशुक को!

उर्वर माँ धरती है।
हिरदय में
अमृत है।
दुधियाया धुला-धुला
उजला दुलार है।

जले – फूल प्राणों का।

राई से खील-खील
बीज जब छिटकेंगे –
शायद अनुभूति बहुत पौदों में



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दूर्वादल-सी
चिकनी —
होकर सहस्रमुखी,
उग आये —
छा जाये —
हरी हरी
उर्वर माँ भूमा की
रस-भीनी परतों पर।

●

१२ मार्च १९५८



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

९

घुटने तोड़ दिये हैं
असह्य एक पल ने,
हाथों में कम्पन भर
छोड़ दिया कगार के मुँह पर ।

खड़े रहो
मेरे दर्प !
सूरज डूबने तक रुके रहो !

जब तक आँखों का तेल चुके,
बोल की मिठास धुले,
विश्वास स्खलित हो रुले,
— तब तक टिके रहो !

एक टूटे पल से
दूसरे भग्न पल की कड़ी तक
— जुड़े रहो !



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अँधेरे की दया-भरी दृष्टि में
भरे हुए
भहरा जाना।
कोई भी इतिहास
शेष
छोड़ मत जाना।

●

१२ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १०

आ गया पतझार
पत्ते झर गये सब।
गोल चक्कर बाँध उट्ठी धूल।
रस टपका—
गये सब डालियों के हरे मुखड़े सूख।

बज रही टहनी,
हवा में
हिल रहा पत्ता।
उड़ा-टूटा, बरस-से लग गये
गिर यहाँ आने में।

धूप मटमैली हुई
भू पर दरारें अब पड़ेंगी—
नींद की सी झोंक झोंके में;
कहीं पर दूर बोला काग
फिर से उठी मैं कुछ जाग···

मेरे सन्तरों के बाग़ में
कुछ फूल आये थे



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सभी क्या टूट जायेंगे ?
खटीली और कड़वी ख़ुशबुएँ
हर एक पत्ती से अचानक सोख···
मिट्टी हवा में मिल
भाग जायेगी ?

वहाँ फिर और छोटे
धूल के चक्कर उठेंगे ?
●

२५ फ़रवरी १९५६


CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ११

— और तब फिर याद आयेगी
ढलेगा उम्र का जब चाँद ।
बीते पल सरकते जा रहे जो—
— जो नहीं हम पकड़ पाते हैं
— जिन्हें हम और भी जल्दी बिताते हैं —
कि
आगे और कुछ पल
हाथ लग जायें ।

अनेकों चित्र उगते हैं

बड़ी ही तेज़ जाती रेल है ।
बिलखती, चीख़ती
कुछ रेंगती, खाती पछाड़ें !
असह उस शोर से ऊपर उठी आवाज़
करते बात तुम
समझा रहे !
इस कठिन कोशिश से
तुम्हारा गर्म है माथा,
गले की नस चमक आयी ।

बड़ी मजबूरियाँ साथी
जिन्हें



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बस मन समझता है
हमारी राह आती है।

अनेकों चित्र उगते हैं—

वहाँ नीला बहुत आकाश था,
नीचे दिये थे, नाव थी,
गंगा बहुत गहरी,
चमकता चाँद था।
सब था वहीं—मन था
मगर कुछ और भी था—
मन जहाँ अटकाव खाता था।

हमारे पल—
किसी के पल।
हमारी 'चुप'—
किसी को बोलने का समय देती थी।

तभी बस एक झटका खा गयी;
तुम उठ गये—
ढलने लगा चन्दा—
उमर कम रह गयी—
दुहरी कमर पर याद की गठरी
उन्होंने लाद दी।

●

२७ मार्च १९५६



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १२

काम में लगी हुई
भूली रही
उठी—
और बाढ़ ने बहा लिया।
टूट पड़ी घटा सर पर
बिछ गयी धरती पर
लहर पर।

उतर चली याद की डुबाई—
पा लिया मूँगा मोती बिछा तल,
खो गयी—
लौट नहीं पायी।

●

२९ अगस्त १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १३

एक क्षण
अकस्मात्
सब कुछ सपना हो गया,
सपने-सा असन्तुलित, मिथ्या,
और हमारा सारा विश्वास
आँखों में रेत भर
सोने के प्रयत्न में रत हो गया ।

जब हम
सो नहीं पाये
असहायता स्वीकार कर
शस्त्र दिये डाल
और
सिर नीचा कर
नंगे पाँव
तपी सड़क पर दूर तक चले गये ।
न कुँआ ढूँढ़ा,
न छाँव ।

सड़क सीधी सागर के मध्य जा
डूब गयी,
एक घूँट पानी के बिना
प्यासे, हम सब,
उसी के साथ-साथ
भीतर तक पैठ गये,



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और फिर कभी भी
ऊपर नहीं उठे।

तुम तो निरे पागल हो।
तुम ? और दोषी ?
तुम भी तो वहीं थे
भीड़ में साथ-साथ,
और यहाँ भी साथ हो
सागर के तल में।

किन्तु सुनो
यहाँ कोई बन्द सीप
मत ढूँढ़ना;
अधर मत खोलना —
प्यास की अतृप्त मणि कण्ठ में धारे ही
काई की तरह फैलना —
लेटना।

यहाँ आकर
सारी भीड़ सोती है।
पैरों के छाले
नमकीन पानी से धोती है।

इतना मत भूलो —
हम तो यहाँ भी विशेष हैं !
इतना ही काफ़ी है —
एक साथ जीने के
थोड़े पल शेष हैं !

●

४ अक्तूबर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १४

बिना गिरे आँसुओं से
चमकीली आँखें
लिये-लिये हँसूँ।
क़ैद बिना हुए
क़ैद रहूँ।
दूर से तुम्हारी
स्वरहीन आवाज़ सुनूँ
—फिर सुनूँ।

जागती रहूँ —
सोती रहूँ।
थाली सरका कर उठ जाऊँ,
बने हुए ग्रास डाल दूँ चिड़ियों को।

सब करती हुई
कुछ न करूँ —
बोलती हुई चुप रहूँ।

होता रहे वह सभी कुछ
जिसकी कभी चाह नहीं।
नहीं करूँ वही
जिसे किये बिना
निबाह नहीं।

●

७ अगस्त १९६४



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १५

मुझे एक सपना दिखता है
अक्सर सोते-जागते,
और न जाने कैसे-कैसे
छोटे-मोटे सपने आ कर मिल जाते हैं
एक अकेले अलग खड़े सपने में

बहुत घनी, कलसाई, हरी बेल-लतरों से
गुँथा, छता,
आकारहीन —
बँगला ही है।
खिड़की-सी है कोने में, पर —
— बस —
लतरों का कुछ विरल झुण्ड —।
उसमें कोई है स्थित अविचल।
लम्बी सफ़ेद कोहनी,
घूमा मुख,
दीख नहीं पड़ता जो।
लगता है —
वह 'कोई' क्या है?
स्पष्ट — पुरुष है।
तर्क?
— मात्र —
मैं नारी हूँ ना!



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बस इतना ही।
और एक —
पत्तों में डूबा
छायादार जंगली रस्ता
ताँबे के पत्तों का लम्बा, सूना।
हवा नहीं जो चरमर बोले।

तभी — अचानक
व्यू मास्टर के नये चित्र-सा
चौड़ा, नीला सागर खुलता।
जिसमें जा कर दूर
कटी धरती-सा वह रस्ता मिल जाता।
उसके पतले, मटमैले, खतरीले कोने पर
कुछ बच्चे
बाल सुनहरी, हवा मिले —
बस
खड़े हुए हैं।
●

१५ दिसम्बर १९५५



४ CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१६

इधर दो दिन लगातार तुमसे मिलने के बाद
लगा
कि हमारे अचानक-बँधे सम्बन्धों में
मीठी नरम घास उगने लगी है।

यह लगने लगा
कि
इसकी ठण्डी हरियाली ही थी
वह —
जिसके लिए बरसों से
आँखें धुँधली थीं
जल रही थीं।

और यह भी
कि
ज़्यादा पास आने से टूट जाने वाला प्यार
बिना पास आये पनपता नहीं।
मैं तुम्हारे नज़दीक आऊँ
या
दूर हट जाऊँ ?



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं खतरा उठा लूँ
या घुटने टिका दूँ ?

तुम्हारी आँखों के पिघल जाने की उम्मीद में
रुकूँ
या पहले ही डर कर मान लूँ —
तुम्हारी आँखें
नहीं हैं मेरा घोंसला —
और उड़ जाऊँ ?

मैं क्या करूँ ?

हमारे अकस्मात् — बँधे
ऊसर सम्बन्धों में
मिठास आने लगी है ।

●

९ सितम्बर १९६४



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १७

यह असम्पृक्तता क्या है ?
जहाँ-जहाँ उलझी हूँ
सुलझ गयी हूँ ।
किन्तु यह सीधा सुलझाव,
यह सपाट रेखा,
यह अनुभूतिशून्यता
क्या है ?

कहीं
यह किसी का
बेहद गहरा दाँव तो नहीं ?
कहीं
यह बिना झुके अहं को झुकाने का
नया पेंच तो नहीं ?

दूर खड़ी सोच पाती हूँ —
देख पाती हूँ —
डूब नहीं जाती हूँ —
यह क्यों है ?
क्या है ?
जो भी है
खतरनाक है·········

●

२७ अगस्त १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१८

यह हवा का सर्द-सा झोंका
बहुत नीला
बड़ा मीठा
उड़े, प्यारे, गुलाबी बादलों पर
पेंग लेता,
झूलता,
आ कूद धानी टहनियों को
चूमता,
चुपके झरोखे से फिसल,
अनजान ही में हाथ दोनों थाम कर
मन प्राण सब सहला गया
है
यह हवा का सर्द-सा झोंका !

१२ जनवरी १९५८



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## १९

जिस दर्द से तिलमिला कर
तुम्हें पुकारती हूँ
कितना उपहासास्पद है ।

आँख में टँगा तारा
झुँझला कर झटक देती हूँ ।
गीत गुनगुनाती ––
उदास हो जाती हूँ ।

जिस अकुलाहट की आँधी ने मेरा
तन-मन झकझोरा है
वह भी ––
वह भी कितनी लघु है,
कितनी अस्तित्वहीन दिखती है ।
जड़ें फैलाती हूँ,
दर्प का बोझ डाल पैर जमाती
— उड़ जाती हूँ ।

बड़े-बड़े अस्तित्वों के बोध कराने वाले तुम
जब
उसी आँधी में
मुझसे टकराते हो,
दर्द की शिला तले



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पिसे पाये जाते हो,
जब
तुम मेरे सहगामी, सहभोक्ता बन आते हो

.................................

हँस-हँस तब धूल-सी
दोहरी हो जाती हूँ।

फिर भी तो
लौट-लौट
उलझन में —
भटकन में —
तुम्हें ही बुलाती हूँ।
●

१६ जून १९६२



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२०

पतली पगडण्डी-सी
धूल-भरी सूनी माँग
अधर-धरे प्यार के
मंगल-नक्षत्रों से भरी गयी।

माथे पर ज्योति झरी !
पर
मन की कोयल मूक
निधि की महत्ता से
डरी-डरी रही !

●

७ अक्तूबर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२१

मैंने ऊँचे बादल देखे
चाँदी के सुन्दर बादल थे।
कुछ ठोस-ठोस —
कुछ पिने हुए —
क्या चाँदी भी रूई-सी पिन सकती है ?
( क्या नील नदी नीली है ? )
— तो नील नदी में सेत कबूतर
मोटे, गुदगुदे, फुदकते
ऐसे ही बादल थे।

मैंने सोचा —
"अब भी तो बादल अच्छे लगते हैं मुझको !
अब भी तो मन में
अनजानी, अनबूझी
एक उदासी घिर आती है !
वह कसक,टीस,
वह दर्द —
सभी हैं
जिनको 'ख़ालीपन की मौज'
बूझ कर छोड़ दिया था।


CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घबराहट हो गयी मुझे —
क्या मैं फिर से
पीछे चल दी ?
कैसे आधुनिक कहाऊँगी
यदि
फिर से गीत
बहारों के,
काले-पीले दिन-रातों के,
फूलों के,
तितली, भौंरों के,
फिर
प्यार और मनुहारों के,
रच लूँगी
फिर से गा लूँगी —
कैसे आधुनिक कहाऊँगी ?

क्या जाने क्या हो गया मुझे !
वह मौज गयी
पर साथ गयी मेरी कविता।
जग की पीड़ाएँ लिखा करूँ ?
आत्मानुभूति को अंकन दूँ ?

— चिन्ता जब मुझ तक आती है —
( भैया बीमार पड़ा करता —
'ये' बहुत थके-से आते हैं )
तब कविता सूझ नहीं पड़ती।
कटुता इतिहास बना रक्खूँ —
कुछ



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मन में उमंग नहीं उठती।

शायद मैं कवि ही नहीं —
मुझे कवि की-सी
सूक्ष्म प्रतीति नहीं —
अनुभूति नहीं मुझमें गहरी !
तो ?
दोनों खो दूँ
— जीवन —
—कविता —?

जाने दो —
'इनकी' बनी रहूँ —
सँकरी सीमा
पर
सफल रहूँ।

कवि बन कर ही क्या पाऊँगी ?

●

१९५५



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## २२

'चलो'
कहो एक बार
अभी ही चलूँगी मैं —
एक बार कहो ।
सुना तब 'हज़ार बार चलो'
सुना —
आँखें नम हुईं
और
माथा उठ आया ।
बालू ही बालू में
खुले पैर, बँधे हाथ
चाँदी की जाली में सिमट,
बहुत दूर —
बहुत दूर नीलम का सागर तब
उमड़ पास आया ।

अनछूए, अनसीमे,
फिसले, अबरकी और
इन्द्रजाल तट पर
हम चलें ।


CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहाँ ?
लहरों पर तिरें
कहाँ ?

खोज, भटक
मधु पा कर
पीछे ही लौटेंगे ?
लौटेंगे भी तो क्या
साहस से तिल-तिल कर
पल-पल झुरने ही को ?

चलना भर सोचोगे
ऐसा क्या होता है !
लहरों में उतरोगे
है इतना हलका मन !
●

१६ मई १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## २३

सूखे दिन में रस-भीनी बातें
कैसे हों ?
बोलो।

बातों की परतें — जाने दो
आज
नहीं ही खोलो !

बीती रात भली थी क्या ?
साँझ से निंदिया आयी—
जब वो जागे तब मैं सोयी
जब सोये तो
पल भर मेरी
आँख नहीं लग पायी।

आज काग बोला था
मैना सोती छूट गयी थी।

मैंने देखा — जाने कैसे
काला भौंरा
कमल कली को छेद
भोर से पहले उड़ आया था।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बड़ी-बड़ी तारीख़
मगर दिन
आज ग़लत आ पहुँचा । —

रात कहीं अटका, भटका
सूरज
भूले-से
सोन शिखर को छोड़
साँवले पर्वत
भरमाया
है ।
●

१६ जनवरी १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२४

बाँस के बहुत घने झुरमुट की
सिरेदार टहनी
— लचीली —
छोटी-सी चिड़िया का श्याम वर्ण
चतुरा की आँख किन्तु
पीली ।

लचकीली टहनी पर
चुकमुक यह चिड़िया लो !

यात्रा की स्मृति-निधि से
बहुत छान-बीन कर
मित्र, बस तुम्हारे हित
जापानी चित्र एक
लाया हूँ ।

●

२८ जून १९५९



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## २५

होंठ सी कर
हाथों में हथकड़ी डाल ली है,
गति बाँध दी है,
गले में फन्दा पहन
डोर तुम्हें सौंप दी है
मैंने ।

आँखें भी कर लूँगी बन्द
और तुम्हारी मुट्ठी में दबे
भवितव्य के सहारे
छोड़ दूँगी
अपने सारे किनारे --
तूफ़ान --
रेत के घरौंदे —
सीपी के सेतु —
प्राणार्पण की वेला में
निष्कम्प रहूँगी
तनी हुई···सीधी···

●

२० अगस्त १९६३



६
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२६

भोर का अजब सपना —
( टूटता तारा पलक ने थाम लिया जैसे हो )
बार-बार लगातार
हठ करके आया ।

लाख बार बरजा था उसे—
"बन्धु,
ऐसी मैं सन्धि नहीं चाह रहा —"
अकुलाहट यों भी क्या जाती है ?
स्वर्ण मृग ! जीवन को ध्वस्त किया चाह रहे !
( चाहे वह जीवन
सोने की लंका
ही क्यों ना हो ! )

ओ सपने !
लौट जा,
कल फिर मत आ जाना ।

जिस की प्रत्यंचा का बाण बना फिरता है —
उस शब्दबेधी से कह देना —
"यों ही चलाया था ?
वहाँ तो शब्द भी नहीं था ......"



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तब तक मैं सोच लूँ —
मान लूँ —
सपना तो सपना है
पहले पहर का
या
तीसरे पहर का ........

●

२२ जुलाई १९५९



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## २७

याद की उँगलियाँ द्वार खटखटाती हैं
आँखें भींग जाती हैं ।

रेगिस्तानी मन में बहार फूट आती,
सागर के शंख बजते,
नभ से फूल झरते,
अगणित सीपियों के हारों तले
कण्ठ में सहमे हुए अश्रु ढलते ।

यह सब अकस्मात् होता है;
मन वर्षों बोझ ढोता है ।

और
अनचीन्हा, अनपेक्षित क्षण आ कर
( मोह-भरी दृष्टि में रुका रुका,
नम हथेलियों के स्पर्श में थमा-थमा )
असंख्य उपहार गोद दे जाता है ।

अपरिचय के सूने पल में
अनायास
घना परिचय ढूँढ़
उँगलियाँ उलझती हैं ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फिर वही पल
स्मृति का आवरण ओढ़,
छद्मवेशी,
आता —
द्वार खटखटाता है;

हमें
रातों जगाता है।

●

१५ अगस्त १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२८

आत्मारहित पशुवत् देह की पुकार
अपने निरावरण दर्द में
असहाय है —

मेघहीन फीके,
नीले रँगे
आसमान-सी
पसरी —

पलकहीन आँख-सी
निर्निमेष —
यह पुकार !

जिसकी असंख्य प्रतिध्वनियाँ
उठती हैं
फूलों के दहकते गुच्छों में,
हिलते
या चुप पड़े परदों में,
उमस
घटाओं में,
सूखी प्रज्ञा को चटखती रगों में !



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतने तेज़ नाख़ूनों से
खुरच जाने वाली आवाज़
क्या असत्य
अस्वीकार्य है ?
और
हर एक उघड़ा हुआ सत्य
क्या अन्ततः
सारे सौन्दर्य की मज्जा के ढेर का
नहीं है
अभिन्न अंश ?

●

२१ मार्च १९६४



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## २९

उस इंगित को तुम्हें बता दूँ
तुम हँस दोगे —
"ऐसी छोटी बात जहाँ सब-कुछ
हो जाये
कैसा हलका प्यार वहाँ है !"

यही बात बस —
यही मापदण्डों की असम आस्था, केवल
मन पर पहरेदार बनी है
तीन भयानक मुँह वाले
प्रगल्भ कुत्ते-सी ।

मंगल को जाती हताश
हत नयी वधू-सी मेरी उमंग
हाथ में अमृत-पात्र ढँका ही
लिये
द्वार पर ठिठक, खड़ी रह जाती है ।

तब
बड़ी अनिच्छा,
बड़ी विवशता से
अमृत ही की दो बूँदें
— दो अलभ्य मोती—



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विशाल मुँह में टपका,
साध उसे
आगे जैसे-तैसे पग बढ़ पाते।

यों बार-बार आना-जाना
यों बार-बार मोती बिखेर
क्या कुछ सध पायेगा, बोलो ?
क्या कहीं दूर के किसी अनिश्चित क्षण में
प्यासी हो
अनजान
कटोरा झपट
पियेगी सब अमृत;
फिर जन्म-जन्म मेरे मन में जी जायेगी ?

लेकिन हो क्या ?
यह आर-जार निःअर्थ बन्द भी कैसे हो ?
मेरी इंगित की चाह
तुझे बरबस ही सदा हँसा जाती।
वह हँसी शर्म की असह भार
कन्धे पर मेरे लाद
झुका मुझको जाती।
तब मैं
बस चुप रह जाती हूँ।

●

१९ मार्च १९५८



७ CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३०

रात-भर गीत चले
ओढ़ परछाइयाँ !
पीपल का सोनरंग पत्ता
अकेला ही काँपा ।
झील करवटें बदलती
हिलकती रही
ग़म का मायूस कमल रहा —
मुँदा
— चुप रहा ।

सहमी हुई रात —
सहमी हुई रात में गीत
और पत्ता
और झील
और सूनापन
— ग़म है —
पर ग़म ग़लत करने को कहते हो ।

तब क्या मैं
गीत से चादरें उघाड़ दूँ
टहनी से पत्ता उतार लूँ
या



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

झील के वक्ष रखूँ हाथ
कहूँ —
'चुप हो जा,
सिहर मत।
क्योंकि तेरी साँस में महक है
महक याद
यहाँ
याद ही ग़म है
सखी !'

●

२४ फ़रवरी १९५९



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३१

यदि जीवन वह होता ना
जो है !
यदि चाँद यहीं आ जाता
सदा फूल खिल जाया करते
मन में —
बन्द नयन में —
...............

क्योंकर उगते कमल तुम्हारे दृष्टि-परस से ?

कैसे
नन्हें भावों के पंछी
अकस्मात् भोरे
उतराते,
आँगन आते ?
सारे घर में दूर-दूर तक
कैसे तिनके बिखरा जाते ?

●

२० सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३२

चाहती हूँ
बिना रुके सीधी चली जाऊँ,
द्वार वही खटखटाऊँ;
बेसुधी का वही बिन्दु
वही चरमोत्कर्ष
बार-बार पाऊँ !

गया हुआ आयेगा,
हाथ से फिसला हुआ
मुट्ठी में आ कर बँध जायेगा ।

आकाश निरभ्र नीला हो उठे !
बर्फ़ में जमा-जमा सूरज उगे !!
बहुत हरी घास,
गुलदावदी,
मीठी मटर,
डेलिया,
पैन्ज़ी का रंग-भरा उत्सव
जाड़े का आगमन
बार-बार लिखे !!!



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरी कविता में,
तेरे काम के व्यस्त क्षणों में
दमकती
सुनहरी परछाइयाँ तिरें !
तब —
तब मीत !
गया हुआ आयेगा,
भूला हुआ गीत
अधर गुनगुनायेगा ।

२५ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३३

उजले उजाले से घिरी हुई चलती हूँ :
जिसमें तुम्हारा सतरंग प्रवेश —
बर्फ़ पर किरणों-सा;
होता है।

ऊदे कुहासे में बहुत पास आ कर
तुम दिखते हो —
चमकदार मणि से।
कोहरे से नम पड़ी आँखों का
सारा जल
भाप हो जाता है।

तब सूखी आँखों में
चुभते हैं सातों रंग —
आँखें
दृष्टिहीन रह जाती हैं।

●

१५ मई १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३४

गीत की असह्य साधारणता
और
उभरा हुआ दर्द ।
उस दर्द की परिणति
यहीं है —
बस यहीं ।
चम्पा की जड़ का मधुहीन रस
चोटी तक पहुँच नहीं पाया ।

अस्थिहीन शब्दों के इन त्यक्त केंचुल में
मुझे मत भरो ।

एक व्याकृति तुमने दी —
एक व्याकृति तुम हो
— सब मेरी आस्था,
सब मान्यताओं की ।

कभी-कभी लगता है —
'लो, बस अब उतर गया —
असावधानी की खूँटी पर
लद गया भ्रम का लबादा !'
लेकिन फिर
वही;



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वही भूल।
तुम तो यही हो — आवरण से अभिन्न।
व्यथा के शीत से सिहर कहाँ पाओगे ?

. . :

एक दिन बेला के फूलों की आँख खुली :
आसमान ताँबे-सा तपा हुआ
झूठे सलमे के तारे और चाँद
टूट कर टपक रहे।
●

८ मई १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३५

गुलाब-सी सुबह में
काँटे-सा कसकता मन —

चाँद के दर्पण में
चोट की तरेड़

मेरी बिटिया के
बादल-से पैर में चुभी
शीशे की कनी —

●

३० सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३६

बहुत समझदार
बढ़ी वयस का
दुर्निवार प्यार —
जो दूसरे को अन्य बाँहों में समर्पित जान
स्वयं भी अन्यत्र समर्पित है !

हर मजबूरी में पिघलता
हमेशा का अवश तन
और
शान्तिकामा बुद्धि
— ग्लानि के ताप से
बचा ले जाती है,
हर बार
लहर से उछाली
सीपी-सा
असम्पृक्त, अकेला छोड़ जाती है ।

फूँक-फूँक पग रखता
सँभला, अनुन्मत्त
यह वयस्क प्यार !



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अकुलाहट स्वीकारते लजाता,
सारी अभिव्यक्तियों को
अनछुला मान
दामन छुड़ाता,
समस्त प्रयुक्त शब्दों से बचता बचाता —
अपनी झुँझलाहट में कसा हुआ
गर्वीला, अकिंचन

किन्तु फिर भी
सर्प-सा उभरता,
सिर पर सवार
यह
प्यार !

●

९ जुलाई १९६४



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३७

पदाघात से अशोक फूल आता है,
सुना है —
मसीहा मुरदे जिलाते थे।

— एक स्पर्श यह है —
रात-रात भर चन्दा जगाता !
नन्हा आघात झरने बहाता !
आँखों के सुनहरे सूर्यमुखी
ज्योतिफूल के साथ
घूम जाते हैं —
हम सब कुछ भूल जाते हैं !

बीती हुई अर्थहीन घड़ियों के
चिह्न भर शेष रहे।
आज तो
बार-बार
याद यही आता है —
"अशोक पर ज्वालाएँ उगती थीं,
मसीहा मुरदे जिलाते थे !"

क्या कभी दिन-रात
कान्तिहीन जाते थे ?

●

११ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३८

अलसी भरी हवाएँ डोलीं ।

मीठी हरी मटर के फूलों,
सरसों की गलबाहीं डाले —
अरहर के गहरे पत्तों में,
फूले पीले लाख सितारे,
झड़बेरी में मनके फूटे
तपी मटीली धूल उड़ी फिर
आसमान से धूप झरी ।

नमक भरे-से चने उगाये
चटकीली दिन-कली खिली ।
लाल रत्तियाँ लोट-लोट कर
काली नटखट आँखों इकटक
भारी अमरूदों को — पानी भरे लालची
ताक रहीं ।

चिट्टे साफ़ नये घोड़े पर
कसे लगाम, ऐंड़ दे बाँकी
नीली-नीली हवा
उड़ी ।

●

१९५६



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ३९

पंख लगा दूर उड़ जाना
यही है क्या ?
सतरंगे इन्द्रधनु झूले पर पेंग
यों ही बढ़ाते हैं ?

क्यों ?
ये पंख मोम के तो नहीं ?
आधी उड़ान में
तनिक ताप पा
क्या —
गलेंगे कहीं ?

नहीं···
भुलावा दो मत ।
इन्द्रधनु तो हैं ही भ्रमजाल ।

लेकिन श ऽ ऽ ऽ
चुप रहो !
शोर मत करो !
सोने दो !
यह भी हो सकता है
सपने कभी टूटें न,
पेंचदार गलियाँ अन्तहीन हों !



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और
सभी कुछ —

जागने की
रोशनी की,
परिधि के बाहर निकल जाये···

●

१८ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४०

रंग बहुत मिल गये
फूल बहुत खिल गये
तारे असंख्य हैं
लेकिन
पहले
तुम बोलो।
लो
तो लो।

आह! तनिक रुको-रुको....
यही रंग तुम लोगे?
मटमैला धूमिल सा!
यही फूल चुनते हो
टूटी पंखड़ियों का!
यही देर से उगता
जल्दी से झँप जाता —
रंगहीन तारा तुम्हारा है?

छुपी-छुपी बातों को ढँका हुआ रहने दो।
तुम लो गुलाब और चाँद
और अरुणाई
मेरा उदास मन
छूओ मत,

सहने दो।

●

५ जनवरी १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४१

तपे हुए माथे पर बर्फ़ सी उँगलियाँ
छुवा दूँ —
किन्तु हाथ उष्ण हैं !
थकी हुई आँखों में
उँड़ेल दूँ अकथ शान्ति —
किन्तु अपने ही दृग दृष्टिहीन हैं !

सूखे अधरों की परतें
रक्तहीन होंठ हर पायेंगे क्या ?

हर हारी हुई राह स्वयं मंज़िल हो जायेगी ।
हर रुका हुआ पग अन्तिम —
हर झुकी पलक
मिथ्या अर्थ देगी —

और —
पल प्रत्येक
सौरभ-विहीन,
सूखा,
झरेगा ।

●

१६ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ४२

ओ मीठे, निरर्थक बोलों के प्रणेता होंठ !

ओ हँसती हुई आँखो !
कैसा सन्देह का बादल
देखते-देखते
तुम्हें मटीला कर जाता है ?

ओ सूखी हथेली वाली
दार्शनिक बाँहों
क्यों मैं तुम्हारे घेरे में
छाया बन जाती हूँ ?
●

१९ मई १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ४१

तपे हुए माथे पर बर्फ़ सी उँगलियाँ
छुवा दूँ —
किन्तु हाथ उष्ण हैं !
थकी हुई आँखों में
उँड़ेल दूँ अकथ शान्ति —
किन्तु अपने ही दृग दृष्टिहीन हैं !

सूखे अधरों की परतें
रक्तहीन होंठ हर पायेंगे क्या ?

हर हारी हुई राह स्वयं मंज़िल हो जायेगी ।
हर रुका हुआ पग अन्तिम —
हर झुकी पलक
मिथ्या अर्थ देगी —

और —
पल प्रत्येक
सौरभ-विहीन,
सूखा,
झरेगा ।

●

१६ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ४२

ओ मीठे, निरर्थक बोलों के प्रणेता होंठ !

ओ हँसती हुई आँखो !
कैसा सन्देह का बादल
देखते-देखते
तुम्हें मटीला कर जाता है ?

ओ सूखी हथेली वाली
दार्शनिक बाँहों
क्यों मैं तुम्हारे घेरे में
छाया बन जाती हूँ ?
●

१९ मई १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ४३

सिर्फ़ याद और याद और याद ···

अन्य कुछ छुआ नहीं जाता
नहीं मन बोता
नहीं कहीं उगता कुछ ।
सिर्फ़ सुबह खिले हुए कुँई फूल
ताल में —
तट पर कुछ सूर्यमुखी,
शाम को झरी हुई मुसी-सी पँखुरियाँ ।
और बस याद, सिर्फ़ याद ···

खिड़की से लगे हुए कीकर की गन्ध
गायों की घण्टियाँ —
शाम के साँवले कपोल पर
आँसू की छिटकी कुछ
कनियाँ
शब्दहीन शोर की उबाती उदासी
और सिर्फ़ याद ···· बस याद ····



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

डूबती उतरती
पल-पल लहर पर —
उसी एक स्मृति की
महक भरी
पाल खुली
नाव —

●

२७ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४४

मोहक बन्धनों में अड़ी हुई फाँस
सदा नहीं टीसती

आँखों पर उतरे हुए जाले भी
सदा नहीं दीखते

किन्तु

विष फैल जाता है
रंग भी धूमिल हो जाते हैं

और

ऐसा मोड़ आता है —

मंज़िल खो जाती है
राह छिप जाती है ।

●

१० मार्च १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ४५

बहुजन की पीड़ा के वन से
आओ ––
पेड़ तराश दें,
काँटे बुहार कर
मार्ग निकाल दें !

हाथ तो क्षत होंगे
किन्तु क्या केवल हमारे ही ?
विक्षत पैरों की स्मृति दुख हरेगी।

कमर भी झुकेगी
लेकिन
दृष्टि तो उठेगी !

प्रणय के पलों को कमा लें —
अर्जित कर लें सुख की अनुभूतियाँ —
आँखों को निरपराधी बना लें !
बहुजन की पीड़ा के वन से
काँटों की झाड़ियाँ हटा दें !



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अकर्म के श्राप से ग्रसे हुए
हम सब
निरर्थक सम्मोहन में बँधे
चले जायेंगे — कब तक ?
कब हमारे शब्द फलेंगे ?
निष्क्रियता के लिए ढूँढ़े बहाने
चुकेंगे कौन तिथि ?
दर्पण से दृष्टि हटा लें !

हर एक अपने से दूजे को
मार्ग नहीं
मंज़िल बना लें !
बहुजन की पीड़ा के वन से
पेड़ तराश कर
मार्ग बना दें !

●

२१ फ़रवरी १९६४



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४६

कभी-कभी ऐसा भी लगता है —
"तभी पास आते हो
जब बहुत दूर जाते हो"

अन्तरंग में
पोर-पोर में बसे हुए —
मुझे स्वयं में रमाये —
कहाँ-कहाँ लिये चले जाते हो !
भागते हुए पेड़, नदी, खेत
छोड़ पीछे —
खिड़की से लगे-लगे दोनों,
पसरी हुई धरती के छोर तक,
साथ-साथ दूर हुए जाते हैं ।

थकी हुई आँखों में नींद —
माथे की सलवट पर हलकी हथेली —
नींद का सपना
हथेली की नमी
बन
उतर आती हूँ ।



१०
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर
अगले ही क्षण
मेरे आँसुओं में चमकते हुए तुम
शीशे के चाँद से
ढुलक आते हो···

और दूरी में पास रहने का
सूना मनबहलाव
— नस-नस में तनाव का
सैलाब उठा लाता है।
— बचकानी ख़ुशियाँ,
भुलावा,
सहज ख़ुश रहने का
हर मधुर दावा,
बहा-बहा
दूर फेंक आता है।

●

२३ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४७

सुबह
जो हर दिन
चिड़िया-सी चहचहाती आती थी,
कन्धे बैठ जाती थी,
आज —
घोंसले से गिरे बच्चे-सी
निस्पन्द पड़ी है।

क्या अब यह चोंच नहीं खोलेगी ?
क्या अब यह पंख हिलेंगे नहीं ही ?

किन्तु इन प्रश्नों से पहले ही
मेरा सिर झुका स्वार्थ
पूछ उठता है —

क्या ऐसे ही —
रोज़-रोज़ थके पाँव आने वाली
राख भरी शाम
आज ही अचानक —
घुँघरू छनकाती,
चूनर लहराती,



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लाखों गुलाबों की सुर्ख़ शहज़ादी बन
आँगन आ जायेगी ?

इसका विश्वास हो जाये तो
बिना झुके,
बिना छुए,
हाथ झाड़ चल दूँ मैं ।

'माँ चिड़िया के आने से पहले ही,
अभी ही !

●

१८ जून १९६२



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४८

विक्षिप्त और लड़खड़ाते पाँव —
गहरी रात में चमकते
उदास मकान की खोखली खिड़कियों से
दूर रह जाते हैं।

पत्तों में सन्नाटा सरसराता है,
पेड़ों में चीते लोट जाते हैं।

और आ जाते हैं आँसू
उन पर झुँझलाहट —

आँसू में अकस्मात्
अंगारे
उग आते हैं।

तब मैं सिर धुनती हूँ —
हवा-सी बिलखती हूँ —
लहर-सा पछाड़ खाता
पागल मन मेरा
बार-बार रोता है —
'उनको मैं····
क्या भूली ?
मैं उनको—क्या कभी भूली ??

●

४ अक्तूबर १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ४९

दर्द की कुछ और कड़ियाँ बढ़ गयी हैं।

शाम ज़्यादा ज़र्द, रातें सर्द
वीरानी सुबह, सूनी दुपहरी —
ज़िन्दगी अजगर सरीखी
सिमट खुलकर रेंगती।

सौ बरस की नींद-सा सपना
कहाँ तक और फैलेगा
न जाने !
और कितने युग खुदेगी नींद मन में !
बन्द कब होंगे हथौड़े छेनियाँ !
पत्थरों की यह ढुलाई
कौन जाने
कब रुकेगी !

मक़बरा बन जाये,
राहत मिल सके मुझको;
असेंधे दुर्ग में

कब
बिना छूई,
बिना रोयी,
सो रहूँगी ?

●

२२ मई १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५०

दो पत्र :
कैनब्रा पर रवीन्द्र की कविता

: १ :

एक बहुत, बहुत सूना महादेश —
शाम का ढलता सूरज
जो पहाड़ियों को बर्फ़ीला बनाता है —
काली सर्द हवा चलने से
पहले का वक़्त
और सड़कों का —
— बहुतेरी —
शाम और अँधेरे के बीच जली
बत्तियों का,
सफ़ेद-सा —
पीला-सा —
प्रकाश····

यानी अब वह सारी ऊपरी गरमियाँ छोड़
कैनब्रा धीरे-धीरे ठण्डी साँसें लेता है।
अजब 'मूडी' है —
बिलकुल 'सिनिकल' —
न
बिलकुल नहीं फबता।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लकड़ी की इमारतों में
पढ़े-लिखों का जमघट
क्योंकि वो इतने 'सिनिकल'
अब भी नहीं
जितना कैनब्रा ।
( उदास घाटियों में आँसू-भरे बादल ?
खुली रोशनी में नन्हीं इमारतें !
अरे, कैनब्रा का 'एबोरिजनल' नाम !!
'यारालुमला'[1] और 'मनूका' का
ध्वनिक-माधुर्य्य !!! )

दोस्त छोड़ दो न मुझे —
फ़िज़ूल उलझते हो —
न हो,
साफ़-साफ़ ज़रा सोचो,
देखना चाहो
तो
उलट लो मेरा कार्ड
और भर लो आँखों में
'कैनब्रा का ऑटम' ।
( टैराकोटा-सा आधा तपा )

पहचान लो —
'सिनिक' होने के नाते
न फबने वाले कैनब्रा के प्रति
मेरा प्यार —

१. कैनब्रा की दो बस्तियाँ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तब कहो;
बड़ा 'इन्टलेक्चुअल' मैं या तुम ?

रवीन्द्र की कविता का उत्तर

: २ :

सूने महादेश के उत्तर में
कोलाहल-भरा नगर भेजती हूँ।
घनी आबादी से बसा हुआ
बादलों के एसबेस्टस से पटा आसमान —
जो बस
बरसता है तो
बरसता ही जाता है।

लेकिन गमलों में कोंपल उगती है
लम्बे हो आते हैं पौधे।
सपनों में लगता है
जैसे
दो पौधे ही
'छायादार जंगली रस्ते' बनाते हैं।

और
यहाँ 'सिनिक' घर गाँव नहीं मिलते :
मिलते हैं
'सिनिक' व्यक्ति



११ CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जिन्हें देख
मन उदास हो जाता है।
वो
जो अभी तक
बीस बरस पुरानी दुनिया की बातों को
सोच-सोच दुहराते,
अपनी बताते हैं।

शायद
मैं भी उन्हीं में हूँ —
'सिनिक' और सीमित और स्वार्थी !
तेरे कैनब्रा के पेड़ों को चूम कर
वाहियात लिखती हूँ —
ज़हर उगलती हूँ।

— क्योंकि
किसी पत्र ने कविताएँ
सधन्यवाद वापस भेजी हैं —

और फिर
अपने ही ज़हर को
'बूज़' समझती हूँ'
पीती हूँ।

और
अपना ही
'गज़ीबो' बनाती हूँ !
'मक़बरा बन जाये,



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'राहत मिल सके मुझको' वग़ैरह वग़ैरह···

यार,
'यारालुमला' की बातें क्यों करते हो ?
हम तुम्हारी कविता का
लुक़मा बना गये,
हज़म···नहीं नहीं···
आत्मसात कर गये !

१७ अगस्त १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५१

रात एक नया गीत गाया था;
किसी ने ख़ुद आकर बजाया था।
( पिघली हुई आग-सा राग या पिलाया था )

किन्तु सुबह होते ही
गीत वह भूल गया।
और
वह साज़दाँ —
देह के कसे तार छेड़
लौट आया जो
चौंक कर पूछ रहा —
"गीत ?
अरे, क्या
तेरे
किसी सपने में
मैं कभी आया था ?"

•

२३ जुलाई १९५९



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५२

एक परत, एक लहर,
खिड़की भर चाँद खुला ।
झाँक ले नज़र भर कर
एक बार ।
घनी रोशनी जहाँ —
घटाटोप
बादल के लोहे के द्वार बन्द ।
खिड़की भर चाँद खुला —
दौड़ो तो —
आकर, नसैनी लगा लो ना !

●

१५ जनवरी १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५३

दुपहरिया फूलों सा तपा छिपा प्यार
देखा ही किसने ?
कब ?
मरुथल-सी आँखों का रेतीला ज्वार
बूँद-भरे सागर के
पीछे ही पीछे तो सदा रहा —
जाना ही किसने ?
कब ?

सँकरीली, पथरीली गलियों में
आकुलता भागी थी
बरसों से, जन्मों से।
जड़ता का पत्थर जो जमा उसे
पल-भर का उजियाला,
नभ छूते पेड़ों की हरियाली,
धरती का सोंधापन,
भाया था।
जड़ता के पत्थर को देख
— भला —
माना ही किसने ?
कब ?



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम कभी क्या मानोगे ?
बादल तो भरा-पुरा आता है
भरा-पुरा जाता है;
रेगिस्तानी मन का बड़ा सजल मान
कभी
तोड़ नहीं पाता है !

●

२२ मई १९५७



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५४

एक गहरी आवाज़
चल रही है मेरे अन्दर
तमाम बन्द द्वार खटखटाती
वो सारे सवाल उठाती
जो मुझे ख़ुद से पूछने का
साहस नहीं हुआ ।

मेरी तहों में जल उठे हैं चिराग़
सारी सम्भावनाएँ
अपने-अपने ब्रह्माण्ड को समेटे
दूर से नगण्य दिखते तारे-सी
जगमगाने लगी हैं ।

उभरने लगी है रात
जिसके अँधेरे में
कई बातें हो जाती हैं सम्भव
लेकिन जो
खरी उतरती हैं तभी
जब सूरज से मिला पाती हैं
आँख ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भीतर ही भीतर
उलझे हुए मार्ग
फैलने लगे हैं खिचकर —
उसी आवाज़ के सहारे
रेखाएँ हो चलीं सीधी ।

अँधेरे से डर नहीं है
अँधेरे से डर नहीं है

मेरा अस्तित्व एक गूँज हो गया है ।

●

४ अक्तूबर १९६४



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५५

मैंने बहुत से कोमल भावों की
हत्या कर दी है,
इस हत्या का दोष मेरे सिर है,
केवल मेरे।

बहुत से पवित्र विश्वासों को
क्षण की आँधी में उड़ा दिया।
इन घोंसलों के बिखर जाने का दायित्व
मेरे कन्धों है
केवल मेरे।

अनेकों उजले होंठों की निरभ्र मुसकान
मेरे अपवित्र हाथों ने पोंछ दी।
पीले पड़े गालों पर बहते आँसुओं का
अजस्र स्रोत
मैंने उन्मुक्त किया है —
केवल मैंने।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किन्तु मैं
    अविचार नहीं हूँ
    समय नहीं हूँ
    लाचारी भी नहीं हूँ।

क्या तुम जानते हो
    — मैं क्या हूँ ?

●

२१ अगस्त १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५६

काश, मेरी कविता तुम्हारे हाथों में
गा देती !
यदि मेरी अनुभूति तुम्हारी शिराओं में
झनझनाती !
बह जाती !

तुम्हारी नीली रेखाओं वाली पलकों की
अबोध झपकन के
कुछ भी अर्थ न निकलते
और
निरर्थक स्पन्दन सस्वर हो जाते !

काश, वह सब हो जाता
जो अब तक नहीं हुआ —
पुलक से फूल झरते
फूलों की परछाइयाँ बनतीं
परछाइयाँ बादल हो जातीं
छा जातीं
और
फिर भी धूप का सुनहरा इन्द्रधनुष
तना ही रहता !



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

असमय तुम मुड़ते न
व्यर्थ ही कोई झकझोर कर
शीत स्पर्श से छूता न !

काश, काश, काश,

मैं आँखें मूँद
अपने सब स्वर समेट पाती —
सो जाती
सोती ही रहती —

●

२८ नवम्बर १९६१



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५७

भीड़ भरी
अकेली शाम
और
घुटी हुई नगरी में
साँसें लेता हुआ मेरा मन
मर गया ।

विशालकाय पहियों के नीचे
पिसी देह
आँख खोल देख रही
कि वह
परित्यक्ता हो चुकी —
क्षय रोगिणी-सी
अस्पृश्या ।

भीड़ उसे छोड़ आगे निकल गयी
और
क्षण-भर में मैं अपने
नये, नितान्त असम्पृक्त
अकेलेपन से
ऊब कर उठ गयी ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दूर खिड़की के पार
हरे-भरे मैदान हैं,
— सब्ज़ बाग़ —
उदास, हर क्षण नुचते
पेड़ हैं —
अनऊँचे,
झरी, मुड़ी पत्तियों वाले ।

और
प्यार की असम्भव कल्पना है
बन्द मुट्ठी से फिसलती
रेत-सी,
असफल प्रयास-सी ।

चारों ओर से घबराकर
राहत ढूँढ़ता हर व्यक्ति
मरा मन,
पिसी देह,
खुली आँखें लिये
भाग रहा है —
गहरे मौन
व
इंगितहीन परिस्थितियों के बीच —

भीड़ से भीड़ तक —
अकेले बन्द कमरे से
नये बन्द कमरे तक —

●

२७ जुलाई १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

५८

गुलाबी कमरे में बैठे-बैठे
नीली बर्फ़ की याद आयी ।

अमलतास से मन फूला
टेसू के असंख्य मंगलतारे टपके ।

और

चित्र छा गये श्रीपत राय के ।

आँखों में नीले सपने झुक आये ।

●

१९ मार्च १९६२



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ५९

दूरी की अतल गहराइयों को
नापती आवाज़
पुकारती है
आत्मज को

और
यहाँ वहाँ
सब कहीं टकरा कर
लौट ग्राती है ।

शंकाओं से भरे गहन नील मन में
जले हुए दीप
जुगनू की तरह —
क्षण में अँधेरे
क्षण में दीप्त
एकसूत्रता के विश्वास से
विहीन हैं ।

प्यार का आधिक्य
तीव्र उमड़न बन
उत्तर के सारे सम्भावित मार्ग


CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर गया अवरुद्ध
और
भर गया धमनियों में
अपने ही स्नेह का
विकल बोझ ।

आवाज़ आत्मज को पुकारती
नापती रही दूरी,
काँपती रही
स्वयंसिद्ध उत्तराभाव में !

●

३० जुलाई १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

६०

व्यक्तित्व की परतों में,
हर तह में,
एक-एक तुम्हारा संवेदन
जम गया है
पतले बर्फ़ के वर्क़-सा —
जो मेरे अहं के बोझ लदा
इधर-उधर से दबा भी
नितान्त एकान्त तुम्हारा है ।

उस ख़ूबसूरत पारदर्शी तुम को
छिन्न-भिन्न करने
जी होता है
हथौड़ा उठा लूं !

तुम रहो ही क्यों ?
तुम कहीं भी क्यों हो ?

तुम — जो मेरे साम्य नहीं ।
तुम — जो कहीं मुझसे कहीं इतर हो
कहीं — बहुत ऊँचे ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गुलाब की लाल पंखड़ियों वाले
मेरे व्यक्तित्व की हर परत में
हर तह में
पतले बर्फ़ के शीशे-से
जमे हुए हो ।

मैं आर-पार
अपने को छू नहीं पाती ।
साँस भी ले नहीं पाती ।
और
धीरे-धीरे
सारी लाल पंखड़ियाँ
काली
हुई जाती हैं ।

●

१९ मार्च १९६२



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ६१

प्रथम स्पर्श का जन्मदिन
प्रथम पुलक बीते का
एक माह—
दूरी में बीत गया।

दृष्टिदान की शुभ वेला
गुज़र गयी पास से।

संवेदन ?
दर्शन तक
आकाश टँगे तारे-सा
अनदेखे की बात की परिधि में
सिमट कर
रीत गया।
●

१३ सितम्बर १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ६२

मीत हमारे !

चैत चाँदनी खिली
खुली रंगीन बदलिया ।
सहजन की चिकनी डालों पर
कचिया हरे रंग के पत्ते
उग आये हैं ।
अमुवा बौरा चुका —
लदा छोटी अमियों से ।
मेरे लीची के पेड़ों पर यौवन आया ।

मीत हमारे !

याद चाँद-सी उगी
उगा गयी, मन फुलबगिया ।
तितली के पंखों से झरकर
मीठी-मीठी, अनमन, ऊँघी,
छीन उदासी बरस पड़ी है !
पिय परदेसी बने
न जाने कैसा हिय है !
निंबुवा के सब फूल झर चुके
मन भर आया ।

●

४ अप्रैल १९५५



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ६३

एक बहुत बड़ा, पंख वाला
पीला साँप
उड़ता हुआ आया है।
मनों बोझ लेकर
आत्मा पर छाया है।
कुण्डली जमा कर···
मन पर आ बैठा है
मन के हाहाकार से अभिज्ञ
तन के इर्द-गिर्द
ऐंठा है।

क्षण-भर को लगा जैसे
अन्धकार हो गया।
सूरज को ढाँप लिया
चील ने
विशाल पंख फैला कर।

बच्चों के सुकुमार कन्धों पर
सीसे का
असह्य बोझ आन पड़ा।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आधी बही नदियों के गीत
सहम, थम गये ।

शिव के डमरू पर थाप नयी बजी
गुड़ियों के गहनों की जगह
मिट्टी और काठ की
सेनाएँ सजीं ।
उड़ती हुई सर्द हवा सनसनाती
वेध जायेगी ।
युद्ध की विभीषिका
जीवन से मरण तक
असंख्य
समानान्तर
रेखाएँ खींच जायेगी ।

किन्तु
हर सर्पदबी देह की आत्मा से एक
कृष्ण
साँवली सशक्त बाहु उठा चला आयेगा —

सर्प की एक ऐंठन को
ढीला कर —
फन को आबद्ध कर —
नाच नचा जायेगा ।

●

१९ जनवरी १९६३



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## ६४

चन्दन तन पर रिसते नासूर लिये
आत्मा
सारे विस्तार माप गयी —

नहीं मिला अश्विनी
नहीं मिली मन्त्रों की
वह अमोघ माला
जो तन-मन का दैन्य दूर करती,
कोई भी शास्त्र नहीं पाया
जिसके स्तवन से
प्राप्त हों ऋद्धियाँ,
वह अबोला नाम
जिसका जाप
काटता शृंखलाएँ —
खोलता मार्ग —
कहीं पर नहीं था।

गलने लगे अंग
झरने लगे अवयव
चलते रहे पैर
चुकता रहा तेल ···



१४

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शर्त्त बहुत बड़ी थी

— अश्विनी मिले किन्तु
दान न दे !

— शास्त्र किसी और के हाथ धरा
पाऊँ ना !

— माला किसी अन्य की
शान्ति का साधन हो,
अपने निमित्त तब
दृष्टि उठाऊँ ना !

रिसे हुए घाव
बहुत तपे हुए पाँव
रहे ।

कभी कहीं बैठेगी छाँह तले,
किन्हीं
शक्तिवान पैरों की संगति में
लेगी
दो-चार काँपते डग नये ।



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक दिन किन्तु ऐसा आ जायेगा,
हताशा का अन्तिम छोर छू जायेगा।

उस दिन
अंगहीन, स्वरहीन, दृष्टिहीन
आत्मा;
खुले आकाश तले
आँख खोल लेटेगी।
केवल
हवा उसके
रूखे केश समेटेगी।

●

२४ सितम्बर १९६३

SPS
891.431 I 2 CH
30074
Sri Pratap Singh Library Srinagar.



CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## भारतीय ज्ञानपीठ

**उद्देश्य**

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण

●

**संस्थापक**

साहू शान्तिप्रसाद जैन

**अध्यक्षा**

श्रीमती रमा जैन

●

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

## भारतीय ज्ञानपीठ

**उद्देश्य**

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण

●

**संस्थापक**

साहू शान्तिप्रसाद जैन

**अध्यक्षा**

श्रीमती रमा जैन

●

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE